



2026:AHC: 171932

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

आपराधिक अपील संख्या - 2756/1987

सईद और अन्य

.....अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रत्यर्थी(गण)

अपीलार्थी(गण) के अधिवक्ता : पी.के.सिंह, पंकज द्विवेदी

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : ए.जी.ए.

न्यायालय संख्या- 92

माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती वानी रंजन अग्रवाल

1. वर्तमान आपराधिक अपील अपर सत्र न्यायाधीश, आगरा द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 39 वर्ष 1986 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 04.11.1987 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 326/34 के अंतर्गत तीन वर्ष के कठोर कारावास, भारतीय दंड संहिता की धारा 324/34 के अंतर्गत एक वर्ष के कठोर कारावास, और भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34 के अंतर्गत छह माह के कठोर कारावास से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है। सभी सजाएं साथ-साथ चलेंगी।

2. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री पंकज द्विवेदी, और राज्य के लिए विद्वान ए.जी.ए. श्री राहुल अस्थाना को सुना गया।

3. अभियोजन का प्रकरण संक्षेप में यह है कि 14.08.1983 को, परिवादी, बाबू खान ने थाना शाहगंज, जिला आगरा में एक लिखित रिपोर्ट प्रस्तुत किया, जिसमें आरोप लगाया गया कि सुबह लगभग 8.30 बजे, उसके बेटे मुस्ताक खान को अभियुक्तों, अर्थात् सईदा, जुम्मा, अल्लाबखश

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



और उसके बड़े भाई कालिया द्वारा घर से बाहर बुलाया गया, और पास के खेत में फरसा और लाठियों से हमला किया गया। परिणामस्वरूप, मुस्ताक के हाथों और पैरों पर गंभीर चोटें आईं।

4. घटना की सूचना मिलने पर, सूचनादाता और उसका रिश्तेदार, शान इलाही, जो उससे मिलने आया था, मौके पर पहुंचे। यह आरोप लगाया गया कि अभियुक्तों ने उन पर भी हमला किया, जिससे सूचनादाता को चोटें आईं और शान इलाही को गंभीर चोटें आईं।

5. लिखित रिपोर्ट के आधार पर, एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई और विवेचना शुरू हुई। विवेचना पूरी होने पर, विवेचना अधिकारी ने अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अंतर्गत आरोप पत्र प्रस्तुत किया।

6. तदनुसार आरोप विरचित किए गए। अभियुक्तों ने आरोपों से इनकार किया और विचारण की मांग किया।

7. अपने वाद के समर्थन में, अभियोजन पक्ष ने पी.डब्ल्यू.-1 बाबू खान, सूचनादाता; पी.डब्ल्यू.-2 घायल मुस्ताक खान; पी.डब्ल्यू.-3 हेड कांस्टेबल परशुराम; पी.डब्ल्यू.-4 डॉ. एस.पी. मिश्रा; पी.डब्ल्यू.-5 डॉ. आर.एस. शर्मा; और पी.डब्ल्यू.-6 उप-निरीक्षक सत्य पाल सिंह का परीक्षण किया गया।

8. दस्तावेजी साक्ष्य में लिखित रिपोर्ट, प्रथम सूचना रिपोर्ट, जी.डी. प्रविष्टि की कार्बन कॉपी, घायल व्यक्तियों की चिकित्सीय परीक्षण रिपोर्ट, घटनास्थल का नक्शा-नजरी, आरोप पत्र, और अन्य संबंधित दस्तावेज शामिल थे, जो अभियोजन पक्ष के गवाहों द्वारा विधिवत सिद्ध किए गए।

9. धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दर्ज अपने बयानों में, अभियुक्तों ने झूठा फंसाए जाने का दावा किया और कहा कि अभियोजन पक्ष के गवाहों ने झूठा साक्ष्य दिया था और उनके विरुद्ध मनगढ़ंत दस्तावेज तैयार किए गए थे। कोई तात्त्विक बचाव साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया।

10. पक्षकारों को सुनने और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात, विद्वान विचारण न्यायालय ने पाया कि कोई भी चोट शरीर के किसी महत्वपूर्ण हिस्से पर नहीं लगी थी और चोटों की प्रकृति ऐसी नहीं थी, जिससे मृत्यु होने की संभावना हो। तदनुसार, अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया। हालांकि, उन्हें भारतीय

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



दंड संहिता की धारा 326/34, 324 और 323 के अंतर्गत दोषसिद्ध किया गया और भारतीय दंड संहिता की धारा 326/34 के अंतर्गत तीन वर्ष के कारावास, भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अंतर्गत एक वर्ष के कारावास, और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अंतर्गत छह माह के कारावास की सजा सुनाई गई, जिसमें सभी सजाओं को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया।

11. दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश से व्यथित होकर, वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई है। अपीलार्थियों की ओर से यह तर्क दिया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का उचित मूल्यांकन करने में विफल रहा और उसके द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष साक्ष्य के विपरीत हैं और विकृत हैं। तदनुसार, अपीलार्थियों की दोषमुक्ति की मांग की गई है।

12. राज्य के लिए विद्वान ए.जी.ए. ने दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय का समर्थन किया है और प्रस्तुत किया है कि अभियोजन साक्ष्य अपीलार्थियों के अपराध को पर्याप्त रूप से स्थापित करता है। इसलिए, उन्होंने अपील खारिज करने की प्रार्थना की है।

13. अपील के लंबित रहने के दौरान, अपीलार्थी संख्या 1, सईदा, और अपीलार्थी संख्या 3, अल्लाबखश की मृत्यु हो गई, और उनके संबंध में अपील उपशमित हो गई। इस प्रकार, वर्तमान अपील केवल अपीलार्थियों जुम्मा और कालिया उर्फ कड़की के संबंध में शेष है।

14. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता के साथ-साथ राज्य के लिए विद्वान ए.जी.ए. को सुनने और अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य का सावधानीपूर्वक पुनः मूल्यांकन करने के पश्चात, यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष घटना और घायल व्यक्ति को चोटें कारित करने में अपीलार्थियों की भागीदारी स्थापित करने में सक्षम रहा है।

15. पी.डब्ल्यू.-1 बाबू खान, सूचनादाता, और पी.डब्ल्यू.-2 मुस्ताक खान, घायल गवाह, ने हमले के संबंध में अभियोजन पक्ष के संस्करण का समर्थन किया है। उनकी गवाही को पी.डब्ल्यू.-4, डॉ. एस.पी. मिश्रा द्वारा सिद्ध किए गए चिकित्सीय साक्ष्य से पर्याप्त पुष्टि मिलती है। मुस्ताक खान, शान इलाही और बाबू खान की चोट रिपोर्टों को विधिवत सिद्ध किया गया है।

16. मुस्ताक खान के मामले में, चोट संख्या 3 और 4 कटे हुए घाव थे, और बाद के एक्स-रे परीक्षण में बाएं तर्जनी की मेटाकार्पल हड्डी के अस्थि-भंग और बाएं टखने पर फिबुला हड्डी के अस्थि-भंग का खुलासा हुआ। इस प्रकार, उक्त चोटें निस्संदेह भारतीय दंड संहिता की धारा 320

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



में अंतर्विष्ट घोर उपहति की परिभाषा के अंतर्गत आती हैं। शेष चोटें प्रकृति में साधारण थीं। हालांकि, किसी भी चिकित्सीय गवाह ने यह राय नहीं दी है कि कोई भी चोट जीवन के लिए खतरनाक थी।

17. अभियोजन साक्ष्य, इसलिए, युक्तियुक्त संदेह से परे स्थापित करता है कि अपीलार्थियों ने स्वेच्छा से मुस्ताक खान को घोर उपहति कारित की। विद्वान विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष कि अभियोजन पक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के आवश्यक तत्वों को स्थापित करने में विफल रहा, भी उचित है, विशेष रूप से किसी भी ऐसी चिकित्सीय राय के अभाव में कि चोटें प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं या कि हमले के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 307 द्वारा परिकल्पित आवश्यक आशय या ज्ञान था। अगला प्रश्न यह है कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 326 आकर्षित होती है। धारा 326 इस प्रकार है:-

"326. खतरनाक आयुधों या साधनों द्वारा स्वेच्छा से घोर उपहति कारित करना-

जो कोई, धारा 335 द्वारा उपबंधित मामले के सिवाय, गोली चलाने, छुरा घोंपने या काटने के किसी उपकरण द्वारा, या किसी ऐसे उपकरण द्वारा, जिसका उपयोग आक्रामक आयुध के रूप में किए जाने पर, मृत्यु कारित होने की संभावना हो, या अग्नि या किसी तप्त पदार्थ द्वारा, या किसी विष या किसी संक्षारक पदार्थ द्वारा, या किसी विस्फोटक पदार्थ द्वारा, या किसी ऐसे पदार्थ द्वारा, जिसका श्वास में जाना, निगलना, या रक्त में पहुंचना मानव शरीर के लिए हानिकारक है, या किसी जंतु द्वारा, स्वेच्छा से घोर उपहति कारित करेगा, तो उसे आजीवन कारावास, या किसी एक अवधि के लिए कारावास से, जिसे दस वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, दंडित किया जाएगा, और वह जुर्माने के लिए भी उत्तरदायी होगा।"

18. धारा 326 वहां लागू होती है जहां गोली चलाने, छुरा घोंपने या काटने के किसी उपकरण द्वारा, या किसी ऐसे उपकरण द्वारा जिसका उपयोग आक्रामक आयुध के रूप में किए जाने पर मृत्यु कारित होने की संभावना हो, या कुछ अन्य विनिर्दिष्ट साधनों द्वारा स्वेच्छा से घोर उपहति कारित की जाती है। वर्तमान मामले में, यद्यपि घायल गवाह ने फरसा और लाठियों के उपयोग के बारे में बात की है, अपीलार्थियों से किसी भी ऐसे हथियार की बरामदगी का कोई संतोषजनक साक्ष्य नहीं है, और न ही घटना में कथित रूप से उपयोग किया गया कोई हथियार प्रस्तुत किया

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



गया है या चोटों के साथ वैज्ञानिक रूप से जोड़ा गया है। चिकित्सीय साक्ष्य चोटों की प्रकृति को स्थापित करता है लेकिन, अपने आप में, यह स्थापित नहीं करता है कि घोर चोटें किसी विशेष खतरनाक हथियार द्वारा कारित की गई थीं जिससे कि भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के अंतर्गत गंभीर अपराध आकर्षित हो।

19. भारतीय दंड संहिता की धारा 325 और 326 के बीच का अंतर तात्त्विक है। भारतीय दंड संहिता की धारा 325 केवल स्वेच्छा से घोर उपहति कारित करने को दंडित करती है, जबकि भारतीय दंड संहिता की धारा 326 को उस तरीके या साधन के संबंध में अतिरिक्त वैधानिक परिस्थिति की आवश्यकता होती है जिसके द्वारा ऐसी घोर उपहति कारित की गई थी। जहां साक्ष्य घोर उपहति को स्थापित करता है लेकिन भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के लिए आवश्यक अतिरिक्त तत्वों को संतोषजनक रूप से स्थापित नहीं करता है, वहां दोषसिद्धि को उपयुक्त रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अंतर्गत बदला जा सकता है। जहां अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री घोर उपहति को स्थापित करती है लेकिन भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के तत्व पर्याप्त रूप से नहीं बनते हैं, वहां भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अंतर्गत दोषसिद्धि उचित है।

20. इसके अतिरिक्त, धारा 222(2) दंड प्रक्रिया संहिता स्पष्ट रूप से यह उपबंध करती है कि जहां किसी व्यक्ति पर किसी अपराध का आरोप लगाया जाता है और सिद्ध किए गए तथ्य उसे एक छोटे अपराध में कम कर देते हैं, तो उसे ऐसे छोटे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है, भले ही उस पर अलग से इसका आरोप न लगाया गया हो।

21. वर्तमान वाद में, अपीलार्थियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के अंतर्गत आरोप इस अभिकथनों पर विरचित किया गया था कि उक्त प्रावधान के अंतर्गत परिकल्पित साधनों द्वारा घोर उपहति कारित की गई थी। साक्ष्य घोर उपहति के मूलभूत तत्व को स्थापित करता है, अर्थात् मुस्ताक खान को हुए अस्थि-भंग, लेकिन भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के अंतर्गत गंभीर अपराध को बनाए रखने के लिए आवश्यक अतिरिक्त तत्वों को युक्तियुक्त संदेह से परे स्थापित करने में विफल रहता है। परिणामस्वरूप, दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अंतर्गत बदले जाने की आवश्यकता है।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



22. तदनुसार, यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष ने युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध कर दिया है कि अपीलार्थियों ने अपने सामान्य आशय के अग्रसरण में, स्वेच्छा से घायल गवाहों को चोटें पहुंचाईं। भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और धारा 34 के साथ पठित धारा 324 के अंतर्गत दोषसिद्धि, साक्ष्य पर विधिक रूप से कायम रहने की सीमा तक, किसी हस्तक्षेप की मांग नहीं करती है। हालांकि, भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 326 के अंतर्गत दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है और तदनुसार इसे अपास्त किया जाता है तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 325/34 के अंतर्गत बदला जाता है।

23. चूंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 325 आरोप में शामिल छोटा अपराध है और सिद्ध किए गए तथ्य घोर उपहति को स्थापित करते हैं, इसलिए दोषसिद्धि में ऐसा परिवर्तन धारा 222 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत स्पष्ट रूप से अनुमेय है।

24. जहां तक विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दी गई सजा का संबंध है, इस न्यायालय ने मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। घटना चार दशक से अधिक समय पूर्व हुई थी, और अपील स्वयं एक असाधारण रूप से लंबी अवधि तक लंबित रही है। अपीलार्थी अब काफी अधिक आयु के हो गए हैं। अभिलेख पर ऐसा कुछ भी इंगित करने के लिए नहीं है कि उनका कोई पूर्व आपराधिक इतिहास है या यह कि अपील के लंबित रहने के दौरान, वे किसी अन्य आपराधिक गतिविधि में लिप्त रहे हैं।

25. सजा देने का उद्देश्य केवल दंडात्मक नहीं है; उपयुक्त वाद में, यह सुधारात्मक और पुनर्वासकारी भी है। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 न्यायालय को यह शक्ति देती है कि वह मामले की परिस्थितियों और अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, किसी अपराधी को तुरंत कोई सजा देने के बजाय उसे सदाचरण की परिवीक्षा पर रिहा कर दे। यह इस प्रकार है:-

"4. सदाचरण की परिवीक्षा पर कतिपय अपराधियों को रिहा करने की न्यायालय की शक्ति।-(1) जब कोई व्यक्ति ऐसे अपराध का दोषी पाया जाता है जो मृत्यु दंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है और जिस न्यायालय द्वारा वह व्यक्ति दोषी पाया गया है उसकी यह राय है कि, वाद की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र शामिल है, उसे सदाचरण की परिवीक्षा पर रिहा करना समीचीन है, तो उस समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



भी, न्यायालय उसे तुरंत कोई सजा देने के बजाय यह निर्देश दे सकता है कि उसे प्रतिभुओं के साथ या उनके बिना एक बंधपत्र प्रस्तुत करने पर रिहा किया जाए, ताकि वह तीन वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के दौरान, जैसा न्यायालय निर्देश दे, बुलाए जाने पर उपस्थित हो सके और सजा प्राप्त कर सके, और इस बीच शांति बनाए रखे तथा सदाचरण का पालन करे:

बशर्ते कि न्यायालय किसी अपराधी की ऐसी रिहाई का निर्देश तब तक नहीं देगा जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि अपराधी या उसके प्रतिभू, यदि कोई हो, का उस स्थान पर कोई निश्चित निवास या नियमित व्यवसाय है, जहां न्यायालय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है या जिसमें अपराधी के उस अवधि के दौरान रहने की संभावना है जिसके लिए वह बंधपत्र निष्पादित करता है।"

26. इसी तरह, धारा 360 दंड प्रक्रिया संहिता ने उपयुक्त वादों में परिवीक्षा पर रिहाई का लाभ देने की विधायी नीति को सन्निहित किया है। यद्यपि धारा 360 दंड प्रक्रिया संहिता की प्रयोज्यता वैधानिक जांच और अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की प्रयोज्यता के अधीन है। यह इस प्रकार है:-

"जब इक्कीस वर्ष से कम आयु का न होने वाला कोई व्यक्ति किसी ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है जो केवल जुर्माने से या सात वर्ष या उससे कम की अवधि के कारावास से दंडनीय है, या जब इक्कीस वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति या कोई स्त्री किसी ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध की जाती है जो मृत्यु दंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है, और अपराधी के विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं होती है, तो यदि उस न्यायालय को जिसके समक्ष वह दोषसिद्ध किया जाता है, अपराधी की आयु, चरित्र या पूर्ववृत्त, और उन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए जिनमें अपराध किया गया था, यह प्रतीत होता है कि अपराधी को सदाचरण की परिवीक्षा पर रिहा करना समीचीन है, तो न्यायालय उसे तुरंत कोई सजा देने के बजाय, यह निर्देश दे सकता है कि उसे प्रतिभुओं के साथ या उनके बिना, एक बंधपत्र प्रस्तुत करने पर रिहा किया जाए, ताकि वह (तीन वर्ष से अनधिक) ऐसी अवधि के दौरान जैसा न्यायालय निर्देश दे, बुलाए जाने पर उपस्थित हो सके और सजा प्राप्त कर सके और इस बीच शांति बनाए रखे और सदाचरण का पालन करे;

"अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



बशर्ते कि जहां कोई प्रथम बार अपराध करने वाला किसी ऐसे द्वितीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट द्वारा दोषसिद्ध किया जाता है जो उच्च न्यायालय द्वारा विशेष रूप से सशक्त नहीं है, और मजिस्ट्रेट की यह राय है कि इस धारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग किया जाना चाहिए, तो वह उस आशय की अपनी राय अभिलिखित करेगा, और कार्यवाहियों को प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट को प्रस्तुत करेगा, और अभियुक्त को ऐसे मजिस्ट्रेट के समक्ष भेजेगा या उसकी उपस्थिति के लिए जमानत लेगा, जो उप-धारा (2) द्वारा उपबंधित तरीके से वाद का निस्तारण करेगा।"

27. अंतर्निहित सिद्धांत यह बना हुआ है कि जहां परिस्थितियां सुधार के अवसर को उचित ठहराती हैं, वहां दोषसिद्धि के बाद अनिवार्य रूप से कारावास नहीं होना चाहिए।

28. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि, सजा का निर्धारण करते समय, न्यायालय को न केवल अपराध की गंभीरता पर बल्कि अभियुक्त की आयु, समय बीतने, पूर्ववृत्त और सुधार की संभावना पर भी विचार करना चाहिए। **वेद प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य, 1981 (1) एससीसी 447** में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी किया कि परिवीक्षा का दर्शन केवल अपराधी को कैद करने के बजाय उसे सुधारने के सिद्धांत पर स्थापित है। इसी तरह, **पंजाब राज्य बनाम सौरभ बख्शी, 2015 (5) एससीसी 182** में, माननीय न्यायालय ने दोहराया कि सजा अपराध के आनुपातिक होनी चाहिए, जबकि अपराधी की परिस्थितियां और समय का बीतना भी प्रासंगिक विचार हो सकते हैं।

29. वर्तमान वाद में, 40 से अधिक वर्षों के बाद अपीलार्थियों को जेल भेजना, जब वे काफी अधिक आयु के हो गए हैं, उनका कोई आपराधिक पूर्ववृत्त नहीं बताया गया है, और उन्होंने स्पष्ट रूप से बिना किसी बाद की आपराधिक संलिप्तता के अपना जीवन व्यतीत किया है, इससे कोई सार्थक उद्देश्य पूरा नहीं होगा। अंतिम न्यायनिर्णयन में असाधारण विलंब भी एक ऐसी परिस्थिति है जिसे उचित सजा पर विचार करते समय पूरी तरह से नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

30. इसके साथ ही, परिवीक्षा का लाभ केवल समय बीतने के कारण नहीं दिया जा रहा है। यह अपीलार्थियों की आयु, पिछले आपराधिक इतिहास की अनुपस्थिति, कार्यवाहियों की असाधारण रूप से बहुत समय से लंबित है, इस बीच की अवधि के दौरान उनके आचरण और बाद की आपराधिक

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



गतिविधि को इंगित करने वाली किसी भी सामग्री की अनुपस्थिति का संचयी प्रभाव है जो इस न्यायालय को परिवीक्षा का लाभ देने के लिए प्रेरित करता है।

31. तदनुसार, दोषसिद्धि के निष्कर्ष को बनाए रखते हुए, अपीलार्थियों पर लगाई गई वास्तविक सजा को अपास्त किया जाता है। इसके बजाय, अपीलार्थियों को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 का लाभ दिया जाता है, और उन्हें सदाचरण की परिवीक्षा पर रिहा करने का निर्देश दिया जाता है।

32. अपीलार्थियों जुम्मा और कालिया उर्फ कड़की को संबंधित जिला परिवीक्षा अधिकारी के समक्ष 10,000/- रुपये का एक व्यक्तिगत बंधपत्र और समान राशि का एक प्रतिभू प्रस्तुत करने पर, इस आशय के एक वचनपत्र के साथ कि वे आज से एक वर्ष की अवधि के दौरान शांति और सदाचरण बनाए रखेंगे, एक वर्ष की अवधि के लिए सदाचरण की परिवीक्षा पर रिहा करने का निर्देश दिया जाता है।

33. उक्त बंधपत्र इस निर्णय की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत किए जाने हैं।

34. किसी भी शर्त के उल्लंघन के स्थिति में, अपीलार्थियों को अभिरक्षा में लिया जाएगा और उन्हें दी गई सजा भुगतनी होगी।

35. उपरोक्त संशोधन के साथ, वर्तमान आपराधिक अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

36. अनुपालन के लिए आदेश की एक प्रमाणित प्रति संबंधित न्यायालय को भी भेजी जाए। विचारण न्यायालय का अभिलेख भी संबंधित जिला न्यायालय को वापस भेजा जाएगा।

4 अगस्त, 2026

पी. पांडेय

(न्यायमूर्ति श्रीमती वानी रंजन अग्रवाल)

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”